(2009) 3 एस.सी.आर. 915

वाई. वैंकया

बनाम

आन्ध्र प्रदेश राज्य

(2004 की आपराधिक अपील संख्या 1279)

मार्च 3, 2009

(न्यायमूर्ति एस.बी. सिन्हा, अशोक कुमार गांगुली आैर आर.एम. लोढा)

दण्ड संहिता, 1860

धारा 120 बी, 420, 468, 477ए सपठित धारा 34 भारतीय दण्ड संहिता, धारा 5(1)(घ) आैर 5(2) भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम सपठित धारा 34 भारतीय दण्ड संहिता-अपराधी पर छात्रों के फर्जी नाम से छात्रवृत्ति की राशि निकालने का आरोप-विचारण न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध किया गया-दोषसिद्धी के निर्णय को उच्च न्यायालय द्वारा पुष्ट किया गया-अभिनिर्धारित-उच्च न्यायालय ने अपना यह निष्कर्ष देने से पहले की अभियोजन अपना मामला साबित करने में सफल रहा है, अभियोजन द्वारा

प्रस्तुत की गई साक्ष्य का बारीकी से विश्लेषण किया-उच्च न्यायालय द्वारा दी गई व्याख्या आैर दिये गये निष्कर्ष में कोई त्रुटि नहीं-दोषसिद्धी आैर दण्डादेश बरकरार रखे गये-भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947-धारा 5(1) (घ) सपठित धारा 5(2)-भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 136

धारा 34-सामान्य आशय-पांच अभियुक्तगण को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 120बी, 420, 468, 477 ए भारतीय दण्ड संहिता आैर धारा 5(1)(घ) आैर 5(2) भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम सपठित धारा 34 भारतीय दण्ड संहिता के अधीन अभियोजित किया गया-उनमें से एक को दोषमुक्त किया गया-अभिनिर्धारित-यदि सहअभियुक्त में से एक को दोषमुक्त भी कर दिया जाता है तो भी अन्याेंं को, यदि तथ्यों के आधार पर सामान्य आशय आैर अपराध किए जाने से पूर्व की साजिश पर्याप्त रूप से साबित हो जाती है तो उनकी संयुक्त जिम्मेदारी से उन्मुक्त नहीं करती है।

अपीलार्थी(अभियुक्तगण संख्या 1 से 4) को आपराधिक अपील संख्या 1280/2004, 1282/2004 आैर 1283/2004 में धारा 120 बी, 420, 468, 477 ए सपठित धारा 34 भारतीय दण्ड संहिता व धारा 5(1)(घ) आैर 5(2) भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 सपठित धारा 34 भारतीय दण्ड संहिता में अभियोजित किया गया है, जिन पर अभियोग था कि इन्होंने काल्पनिक छात्रों के नाम से विभिन्न शैक्षणिक संस्थानों से छात्रवृत्ति की राशि निकालकर सरकार के साथ धोखा कर सरकारी धन का

दुरूपयोग किया। विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी संख्या 1, 3 आैर 4 के विरूद्घ लेनदेन के संव्यवहार के आधार पर आरोप साबित पाए आैर अपीलार्थी संख्या 2 को एक लेनदेन के संव्यवहार के आधार पर दोषी पाया क्योंकि अन्य संव्यवहारों के समय वह छुट्टी पर था। तद्नुसार अपीलार्थी संख्या 1 से 4 को आरोपित अपराधों में दोषसिद्घ कर अपीलार्थी संख्या 1, 3 व 4 प्रत्येक को प्रत्येक अपराध के लिए तीन साल के कठोर कारावास की सजा आैर अपीलार्थी संख्या 2 को प्रत्येक अपराध के लिए एक साल आैर छः माह के कठोर कारावास की सजा से दण्डित किया गया। अभियुक्त ए-1 से ए-5 को आपराधिक अपील संख्या 1279/2004 आैर 1281/2004 में भी जुनियर काॅलेज आॅफ गर्ल्स से काल्पनिक छात्रों के नाम से छात्रवृत्ति की राशि निकालने के समान अपराध अपराध से दण्डित किया गया। विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी संख्या 2 से 5 को आरोपित पाया आैर उनको दोषसिद्घ किया तथा उनको दो साल के कठोर कारावास से दण्डित किया, परन्तु जो अपीलार्थी संख्या 2 है, उसको समस्त आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया। उच्च न्यायालय ने सभी दोषसिद्घों की आेर से दायर की गई अपीलों को खारिज कर दिया।

अपीलों को खारिज करते हुए न्यायालय नेः-

अभिनिर्धारित किया कि 1.1. उच्च न्यायालय द्वारा किए गए साक्ष्य के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि अभियोजन अपना मामला साबित

करने में सफल रहा है। अभियुक्तगण ने आपसी साजिश के तहत काल्पनिक नामों के आधार पर पैसे निकालें है, जिससे उन्होंने सरकार के साथ धोखाधडी की है व सरकारी धन का दुरूपयोग किया है। उच्च न्यायालय ने अपने निष्कर्ष पर पहुँचने से पहले की अभियोजन अपना मामला साबित करने में सफल रहा है, साक्ष्य का बहुत सुक्ष्मता से विश्लेषण किया है।(पैरा 18 आैर 2)(921-जी-एच; 922-ए-बी; 924-एच; 925-ए)

2.1. जहाँ धारा 34 लागू होती है आैर अभियुक्त के विरूद्घ सामान्य आशय का आरोप साबित हो जाता है, वहाँ उसके दायित्व को इस धारा की व्यापकता के अध्यधीन रहते हुए विचार किया जाना होता है। हस्तगत प्रकरण में विचारण न्यायालय द्वारा व उच्च न्यायालय द्वारा अभियोजन साक्ष्य के विस्तार से किए गए विवेचन से अभियुक्तगण के मध्य उनका सामान्य आशय पर्याप्त रूप से साबित होता है। (पैरा 23) (925-सी-डी)

मोहन सिंह व अन्य बनाम पंजाब राज्य **ए.आई.आर. 1963 एस.सी. 174;** सुरेश व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य **(2001) 3 एस.सी.सी. 673;** लल्लन राय व अन्य बनाम बिहार राज्य **(2003) 1 एस.सी.सी 268;** सरावनन व अन्य बनाम पोंडिचेरी राज्य **(2004) 13 एस.सी.सी. 238**

आैर रोताश बनाम राजस्थान राज्य **(2006) 12 एस.सी.सी. 64,** पर विश्वास किया।

''द क्वीन बनाम गोराचन्द गोपे व अन्य **"बंगाल लाॅ रिपोर्टस, सप्लीमेंटल वाॅल्यम, 443;** बरेन्द्र कुमार घोष बनाम किंग एम्परर **ए.आई.आर. 1925 पी.सी. 1** एम्परर बनाम निर्मल कान्ता राॅय, **आई.एल.आर. 1914 (वाॅल्यम 41) कल. 1072, सदंर्भित।**

2.2 सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित सिद्घान्तों को हस्तगत प्रकरण के विवादग्रस्त तथ्यों एवं परिस्थितियों के सम्बन्ध में विचारण न्यायालय व उच्च न्यायालय द्वारा दिये गये निष्कर्षों के संबंध में समवर्ती रूप से लागू करें तो इस निष्कर्ष से बचा जा सकता है कि वे तथ्य स्पष्ट रूप से अभियुक्त की बेगुनाही के साथ असंगत हैं आैर किसी भी स्पष्टीकरण या किसी अन्य उचित परिकल्पना के लिए असमर्थ हैं। मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में अभियुक्तों का सामान्य आशय आैर उनकी पूर्व सहमति पूर्णतया से साबित होती है। (पैरा 35 आैर 38) (928-एफ-जी;929-एफ)

2.3 इस तरह के मामले में, भले ही एक अभियुक्त को दोषमुक्त कर दिया जावे, लेकिन इससे अन्य सहअभियुक्तों को अपराध के संयुक्त दायित्व से मुक्त नहीं किया जा सकता है। इस बारे में विधि एकदम स्पष्ट है कि एक सहअभियुक्त की दोषमुक्ति होने के बावजूद भी न्यायालय अन्य

सहअभियुक्तोंको धारा 34 के तहत संयुक्त दायित्व के आधार पर दोषी ठहराने के लिए स्वतन्त्र है यदि उनके खिलाफ उनका"सामान्य आशय के अग्रसरण" में कार्य किया जाना साबित हो जाता है तो। (पैरा 39)(929-जी-एच)

3. भारत के संविधान के अनुच्छेद 36 के तहत एक अपील में यह न्यायालय विचारण न्यायालय आैर उच्च न्यायालय द्वारा की गई साक्ष्य की समीक्षा आैर पुनर्मूल्याकंन में तब तक हस्तक्षेप नहीं करेगा जब तक कि यह दर्शित नहीं कर दिया है कि विचारण न्यायालय या उच्च न्यायालय ने विधि आैर प्रक्रिया की स्पष्ट रूप से त्रुटि की है या जो निष्कर्ष निकाले गये है वो स्पष्ट रूप से त्रुटिपूर्ण है तथा जब यह दर्शित हो कि साबित तथ्यों पर विधि का गलत रूप से निष्कर्ष दिया गया। वर्तमान मामले में उच्च न्यायालय के निष्कर्ष में कोई त्रृटि नहीं है आैर न ही तथ्यों के आधार पर वह किसी गलत निष्कर्ष पर पहुँचा है। याचिका सारहीन होने से खारिज की गई। (पैरा 41, 43 आैर 44)(936-बी-डी;एफ, जी)

दुली चन्द बनाम दिल्ली प्रशासन **(1975) 4 एस.सी.सी. 649;** दलबीर कौर बनाम पंजाब राज्य **(1976) 4 एस.सी.सी. 158;** रमनभाई नरेनभाई पटेल बनाम गुजरात राज्य-**(2000) 1 एस.सी.सी. 358;** चन्द्र बिहारी गौतम बनाम बिहार राज्य **(2002) 9 एस.सी.सी. 208** आैर राधा

मोहन सिंह उर्फ लाल साहेब व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य **(2006) 2 एस.सी.सी. 450,** विश्वास किया।

संदर्भित मामले

बंगाल लाॅ रिपोर्टस,	
सप्लिमेंटल वाॅल्यम , 443	**उल्लिखित**
पैरा 26	
ए.आई.आर. 1925 पी.सी. 1	**उल्लिखित**
पैरा 27	
आई.एल.आर. 1914 (वाॅल्यम 41) कल. 1072	**निर्भरता**
पैरा 30	
ए.आई.आर. 1963 एस.सी. 174	**निर्भरता**
पैरा 31	
(2001) 3 एस.सी.सी. 673	**निर्भरता**
पैरा 32	
(2003) 1 एस.सी.सी. 268	**निर्भरता**
पैरा 34	

(2004) 13 एस.सी.सी. 238 **निर्भरता**

पैरा 36

(2006) 12 एस.सी.सी. 64 **निर्भरता**

पैरा 37

(1975) 4 एस.सी.सी. 649 **निर्भरता**

पैरा 41

(1976) 4 एस.सी.सी. 158 **निर्भरता**

पैरा 41

(2000) 1 एस.सी.सी. 358 **निर्भरता**

पैरा 41

(2002) 9 एस.सी.सी. 208 **निर्भरता**

पैरा 41

(2006) 2 एस.सी.सी. 450 **निर्भरता**

पैरा 42

आपराधिक अपील क्षेत्राधिकारः आपराधिक अपील संख्या 1279/2004

आपराधिक अपील संख्या 1188/1997 में हैदराबाद में हैदराबाद उच्च न्यायालय के निर्णय व आदेश दिनांकित 31.03.2003 से

संलग्न

आपराधिक अपील संख्या 1280/2004, 1281/2004, 1282/2004 तथा 1283/2004

अपीलार्थी की आेर से जी.वी. चन्द्रशेखर, टी.एन. राव, मनजीत कृपाल, मितेन महापात्रा, के.मारूती, के. राधा व अंजनी अयागरी

प्रत्यर्थी की आेर से आई. वेंकटनारायण, अल्ताफ फातिमा व डी. भारती रेड्डी

न्यायालय का निर्णय **न्यायमूर्ति अशोक कुमार गांगुली** द्वाराः-

1. इन सभी पांचों आपराधिक अपीलों पर एक साथ सुनवाई की गई, जिनमें से आपराधिक अपील संख्या 1280/2004, 1282/2004 तथा 1283/2004 जो आदेश दिनांक 31.010.2003 द्वारा आपराधिक अपील संख्या 1795/1997, 1757/1999 तथा 1826/1999 जो कि आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा की गई थी, उनके विरूद्ध पेश की गई है, जिनमें माननीय उच्च न्यायालय द्वारा सीसी. नम्बर 6/1999 में दिनांक 11.10.999 में एस.पी.ई. व ए.सी.बी. प्रकरणों के अतिरिक्त विशेष

न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश की पुष्टि करते हुए अपीलार्थी की अपील को खारिज किया गया।

2. अपीलकर्ता- वाई. वेंकैया (ए-3) आपराधिक अपील संख्या 1280 में वी. रामा राव (ए-1), एसए रशीद (ए-2) और पी. क्रनवार (ए-4) के साथ उप निदेशक, समाज कल्याण विभाग, नलगोंडा के कार्यालय में कनिष्ठ सहायक के रूप में कार्यरत थे।

3. अपीलकर्ता-एसए रशीद (ए-2) आपराधिक अपील संख्या 1282/2004 में एक समाज कल्याण निरीक्षक के रूप में आैर अपीलकर्ता-पी क्रानवार (ए-4) आपराधिक अपील संख्या 1283/2004 में समाज कल्याण सरकारी छात्रावास, नलगोंडा में एक वार्डन के रूप में कार्यरत थे।

4. उपरोक्त आरोपी नंबर 2, 3 और 4 पर साजिश करते हुए गीता विज्ञान आंध्र कलाशाला, नलगोंडा और गवर्नमेंट जूनियर कॉलेज फॉर बॉयज़, नलगोंडा के फर्जी पोस्ट-मैट्रिक छात्रों के आधार पर बिल संख्या 504,238 और 326 के माध्यम से दूसरी बार रुपये 63,522/- की राशि के लिए छात्रवृत्ति प्राप्त करने की कथित साजिश के लिए मुकदमा चलाया गया था।

5. इसके अलावा, यह आरोप लगाया गया है कि ए-1, ए-2 और ए-3 ने नलगोंडा जिले के एसएलएलएस जूनियर कॉलेज, अलायर, नागार्जुन जूनियर कॉलेज, मिर्यालागुडा, राजाराम मेमोरियल जूनियर कॉलेज, सूर्यापेट के फर्जी पोस्ट-मैट्रिक छात्रों के लिए भी छात्रवृत्ति राशि निकाली और सरकार को धोखा दिया और ए-4 की मिलीभगत से बिल संख्या 461, 506, 218 और 503 के माध्यम से 4,57,050/- रुपये की राशि का दुरुपयोग किया।

6. 29.3.1990 को धारा 120बी , 420 , 468 , 477 ए भारतीय दण्ड संहिता और धारा 5(2) सपठित 5(1)(घ) भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत अपराध के लिए ए-2, ए-3 और ए-4 के खिलाफ अभियोग चलाने की मंजूरी दी गई थी।

7. दिनांक 11.10.1999 को एस.एस.ई आैर एसीबी प्रकरणों के विद्वान अतिरिक्त विशेष न्यायाधीश हैदराबाद इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि ए-1 से ए-4 आरोपों के दोषी हैं और ए-1, ए-3 और ए-4 को बिल संख्या 504,238,326 (63,522/- रुपये) की राशि के संबंध में उनकी भागीदारी के लिए उनको दोषी ठहराया और उन्हें बिल संख्या 461,506,218 और 503 के माध्यम से 4,57,050/- रुपये के दुरुपयोग के लिए भी दोषी ठहराया गया।

8. ए-1, ए-3 और ए-4 को प्रत्येक को प्रत्येक आरोप के लिए तीन साल के कठोर कारावास और प्रत्येक को प्रत्येक आरोप के लिए 2000/- रुपये का जुर्माना अदा करने की सजा सुनाई गई।

9. विचारण न्यायालय ने ए-2 को अन्य बिलों अर्थात् बिल नंबर 505,506,503 और 218 के संबंध में लाभ दिया क्योंकि वे तब तैयार किए गए थे जब ए-2 छुट्टी पर था। जहां तक इस विधेयक संख्या 461 का संबंध है, ए-2 को धारा 120(बी) , 420 , 468 , 477-ए सपठित धारा 34 भारतीय दण्ड संहिता और धारा 5(1)(डी) सपठित 5(2) भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम , 1947 सपठित धारा 34 भारतीय दण्ड संहिता के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया गया था आैर प्रत्येक आरोप के तहत 18 महीने के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई और प्रत्येक आरोप के तहत 1000/- रुपये का जुर्माना भी अदा करना पडा। ए-2 को कम अवधि की सजा सुनाई गई क्योंकि उसे एक फर्जी बिल संख्या 461 की राशि के दोहरे आहरण का दोषी पाया गया था। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, अन्य फर्जी बिलों के संबंध में, उसे संदेह का लाभ दिया गया था क्योंकि बिल तब तैयार किए गए थे जब वह रूपान्तरित अवकाश पर थे.

10. उच्च न्यायालय की एकल पीठ ने दिनांक 31.10.2003 के एक आदेश द्वारा अपीलों को खारिज कर दिया और विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित किए गए फैसले, दोषसिद्धि और सजा की पुष्टि की।

11. जहां तक आपराधिक अपील संख्या 1279/2004 और 1281/2004 का संबंध है, वे क्रमशः आपराधिक अपील संख्या 1188/1997 और 1125/1997 में दिनांक 31.10.2003 के उच्च न्यायालय के फैसले के खिलाफ हैं, जो सीसी क्रमांक 5/1991 में एस.पी.ई व ए.सी.बी. प्रकरणों के अतिरिक्त विशेष न्यायाधीश, हैदराबाद के निर्णय दिनांक 30.9.1997 की पुष्टि करता है।

12. इन अपीलों में अपीलकर्ताओं वाई. वेंकैया (ए-4) और एसए रशीद (ए-3) पर सरकारी जूनियर कॉलेज फॉर गर्ल्स, नलगोंडा के फर्जी पोस्ट-मैट्रिक छात्रों के आधार पर ब्यूला-ए-5(मैट्रन) की मिलीभगत से बिल संख्या 363 और 405 के माध्यम से 54,600/- रुपये राशि की छात्रवृत्ति निकालने की कथित साजिश के लिए मुकदमा चलाया गया था।

13. आंध्र प्रदेश सरकार के प्रमुख सचिव ने दिनांक 29.3.1990 के आदेश के द्वारा ए-1, ए-3 से ए-5 के खिलाफ अभियोग चलाने की मंजूरी दी और आदेश दिनांक 21.9.1990 के जरिये ए-2 के खिलाफ अभियोग चलाने की मंजूरी दी।

14. 30.9.1997 को एसपीई और एसीबी मामलों के विद्वान अतिरिक्त विशेष न्यायाधीश, हैदराबाद ने माना कि ए-1 ने कोई अपराध नहीं किया है और परिणामस्वरूप उसे सभी आरोपों से बरी कर दिया गया। विद्वान न्यायाधीश ने अभियुक्त संख्या 2 से 5 तक को अपराध का दोषी पाया और

उन्हें दो साल के कठोर कारावास और प्रत्येक मामले में 500/- रुपये के जुर्माने की सजा सुनाई।

15. 31.10.2003 को, उच्च न्यायालय ने विचारण न्ययालय द्वारा अभिलिखित फैसले, दोषसिद्धि और सजा की पुष्टि करते हुए अपील को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि अपीलार्थीगण ने साजिश करके रिकॉर्ड में हेराफेरी करके काल्पनिक पोस्ट-मैट्रिक छात्रवृत्ति की राशि निकालकर सरकार के साथ धोखाधडी की है, जो कि उनका लोक सेवकों के रूप में उनकी पदीय हैसियत के दुरूपयोग और आपराधिक कदाचारको बढ़ावा देने की श्रेणी में आने वाला कार्य है।

16. जहां तक मंजूरी का सवाल है, इसकी वैधता पर हमारे सामने कोई सवाल नहीं उठाया गया।

17. ऐसा प्रतीत होता है कि बहुत से गवाहों को परीक्षित किया गया। 1999 की आपराधिक अपील संख्या 1757, 1795 और 1826 में उच्च न्यायालय के दिनांक 31.10.2003 के फैसले से, ऐसा प्रतीत होता है कि अभियोजन पक्ष द्वारा 18 गवाहों को परीक्षित करवाया गया था। उच्च न्यायालय का दूसरा निर्णय, दिनांक 31.10.2003, 1997 की आपराधिक अपील संख्या 1125 और 1188 से संबंधित था। उक्त निर्णयों से ऐसा प्रतीत होता है कि अभियोजन पक्ष द्वारा 8 गवाहों को परीक्षित करवाया गया था।

18. सभी गवाह आधिकारिक पद पर थे और अपील के तहत निर्णयों में उच्च न्यायालय द्वारा किए गए उनके साक्ष्य के विश्लेषण से पता चलता है कि अभियोजन पक्ष गीता विज्ञान आंध्र कलासल, नलगोंडा (जीवीए कलासला), गवर्नमेंट जूनियर कॉलेज फॉर बॉयज़, नलगोंडा (जीजे कॉलेज), एसवाईएलएनएस जूनियर कॉलेज, अलायर, नागार्जुन जूनियर कॉलेज, मिर्यालगुडा, राजाराम मेमोरियल जूनियर कॉलेज, सूर्यापेट और सरकारी जूनियर आॅफ बायज, नलगोंडा से छात्रों के सम्मान में दो बार धन निकालने में आरोपी व्यक्तियों के बीच साजिश के मामले को साबित करने में सक्षम है। वे राशियाँ बिल संख्या 405, 461, 505, 506, 503, 218, 238, 231, 326, 240, 219 और 504 जैसे विभिन्न बिलों के विरुद्ध निकाली गई थीं। यह साबित हो गया है कि उन बिलों के संबंध में फर्जी नामों के आधार पर दो बार पैसे निकाले गए है। इस प्रकार धोखाधड़ी कर सरकारी धन का दुरुपयोग किया गया है।

19. 1999 की आपराधिक अपील संख्या 1757, 1795 और 1826 के संबंध में जिन गवाहों की जांच की गई, वे पीडब्लू1, 1986-87 के दौरान निदेशक, समाज कल्याण विभाग के कार्यालय में लेखा अधिकारी हैं। पीडब्लू2 जुलाई, 1984 और जनवरी, 1987 के दौरान उप निदेशक, समाज कल्याण विभाग के कार्यालय में लेखाकार था। पीडब्लू3 1986-88 के दौरान डीटीओ, नलगोंडा के कार्यालय में उप-कोषागार अधिकारी था। PW4

प्रासंगिक समय के दौरान एजी कार्यालय में वरिष्ठ लेखा अधिकारी था। पीडब्लू5 1986-89 के दौरान एसबीएच, नलगोंडा के प्रबंधक थे। प्रिंसिपल, जीवीए कलासाला, नलगोंडा 1986-87 के दौरान कॉलेज के प्रभारी थे, पीडब्ल्यू 6 थे। पीडब्लू7 1980-89 के दौरान जीजे कॉलेज, नलगोंडा के जूनियर लेक्चरर थे। पीडब्लू8, नालगोंडा के बॉयज़ जूनियर कॉलेज के प्रिंसिपल थे, जिन्होंने 1987 में इस पद पर काम किया और 1988 में सेवानिवृत्त हुए। पीडब्लू9 1985 से सी एल एमएस जूनियर कॉलेज, अलायर के प्रिंसिपल थे। पीडब्लू10 नागार्जुन जूनियर कॉलेज, मिर्यालगुडा के पूर्व प्रिंसिपल थे, जो पहले काम करते थे। अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के लिए छात्रवृत्ति हेतु समाज कल्याण विभाग को प्रस्ताव भेजें । पीडब्लू11 गीता विज्ञान आंध्र कलाशाला, नलगोंडा में बीए का छात्र था। पीडब्लू12 नलगोंडा के जीजे कॉलेज फॉर बॉयज़ में इंटरमीडिएट प्रथम वर्ष का छात्र था, इस गवाह को पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया था। पीडब्लू13 गवाह था जिसने 1986-88 के दौरान जीवीए कलसाला, नलगोंडा में डिग्री कोर्स किया था, उसे भी पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया था। जीवीके कॉलेज, नलगोंडा के एक अन्य छात्र की जांच पीडब्लू14 के रूप में की गई। पीडब्लू15 एक अन्य छात्र था जिसने छात्रवृत्ति के रूप में केवल एक बार 825/- रुपये की राशि प्राप्त करने की गवाही दी थी। राजाराम मेमोरियल जूनियर कॉलेज, सूर्यापेट के पूर्व प्रिंसिपल से पीडब्लू16 के रूप में पूछताछ की गई। पीडब्लू17 नलगोंडा के समाज कल्याण विभाग के उप निदेशक थे।

पीडब्लू18 वह जांच अधिकारी था जिसने एफआईआर जारी करने की गवाही दी थी और कहा था कि सरकार से अनुमति मिलने के बाद अदालत में आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया था। दो छात्रों (पीडब्लू.12 और 13) को छोड़कर, जिन्हें पक्षद्रोही घोषित किया गया था, सभी ने अभियोजन मामले का समर्थन किया। उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश ने इस निष्कर्ष पर पहुँचने से पहले कि अभियोजन पक्ष का मामला सिद्ध हो गया है, गवाहों के साक्ष्यों की विस्तृत चर्चा की। ऊपर उल्लिखित आपराधिक मामलों, अर्थात् आपराधिक अपील संख्या 1125 और 1188, 1997 के संबंध में उच्च न्यायालय के फैसले से यह भी पता चलता है कि अभियोजन पक्ष के लिए आठ गवाहों का परीक्षण किया गया था। जिन गवाहों का परीक्षण किया गया, उनमें से पीडब्लू1 एक सेवानिवृत्त संयुक्त लेखा निदेशक, पेंशन भुगतान अधिकारी, हैदराबाद था, और प्रासंगिक समय पर समाज कल्याण निदेशक, हैदराबाद के कार्यालय में लेखा अधिकारी के रूप में काम कर रहा था। पीडब्लू2 नालगोंडा जिले के नाकरेकल में उप-कोषागार अधिकारी थे और पहले उप निदेशक, समाज कल्याण, नालगोंडा के कार्यालय में लेखाकार के रूप में काम करते थे। पीडब्लू3, सरकारी जूनियर कॉलेज फॉर गर्ल्स, नलगोंडा के सेवानिवृत्त प्रिंसिपल थे, जिन्होंने 1979 और 1988 के बीच प्रासंगिक समय पर उक्त कॉलेज के प्रिंसिपल के रूप में काम किया था। पीडब्ल्यू4 ने प्रासंगिक समय पर नलगोंडा में सहायक समाज कल्याण अधिकारी के रूप में काम किया था। पीडब्लू5 एक एस.टी.आे., नलगोंडा

था, पीडब्लू6 वरिष्ठ लेखा अधिकारी, एजी कार्यालय, हैदराबाद था। पीडब्लू7 प्रबंधक, एसबीएच, नलगोंडा था और पीडब्लू8 पुलिस निरीक्षक, भ्रष्टाचार निरोधक शाखा, हैदराबाद, रेंज था।

20. इस मामले में अभियुक्त की ओर से प्रतिरक्षा में दो गवाहों की गवाही करायी गयी। डी.डब्ल्यु-1, जो 12.06.1997 को उप निदेशक, समाज कल्याण विभाग, नलगोंडा के रूप में कार्यरत है और डी.डब्ल्यु-2, जिन्होंने 1984 से 1988 तक समाज कल्याण कार्यालय, नलगोंडा में समाज कल्याण आयोजक के रूप में काम किया।

21. इस अदालत ने पाया कि उच्च न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने से पहले गवाहों के साक्ष्यों का बहुत बारीकी से विश्लेषण किया है कि अभियोजन पक्ष अपना मामला साबित करने में सफल रहा है।

22. 2004 की आपराधिक अपील संख्या 1282 में ए-2 द्वारा एक विशिष्ट बचाव लिया गया था कि वह 26.8.1986 से 14.10.1986 तक चिकित्सा अवकाश पर था, इसलिए वह बिल पर हस्ताक्षर नहीं कर सकता था। इस बचाव को उच्च न्यायालय ने अपने फैसले में स्पष्ट रूप से यह अभिलिखित करते हुए निस्तारित किया कि बिल (प्रदर्श पी-1) पर ए-2 के हस्ताक्षर की तारीख 25.8.1986 थी, जब वह छुट्टी पर नहीं था। इसलिए, इस बचाव पर भी विचार किया गया और सही ढंग से खारिज कर दिया गया।

23. ऐसे मामले में जहां भारतीय दण्ड संहिता की धारा 34 लागू होती है, जैसा कि इस मामले में है, यदि अभियुक्त के खिलाफ सामान्य आशय का आरोप साबित हो जाता है, तो अभियुक्त के दायित्व पर उस धारा की व्यापकता के आधार पर विचार किया जाना चाहिए । यहां आरोपी व्यक्तियों के बीच सामान्य आशय का आरोप उन साक्ष्यों से स्पष्ट रूप से लगाया गया है जिन पर विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों द्वारा विस्तार से चर्चा की गई है।

24. यह सत्य है कि धारा 34 कोई सारभूत अपराध का सृजन नहीं करती है और मूल रूप से साक्ष्य का नियम है। लेकिन इस धारा में परिभाषित खंड में महत्वपूर्ण शब्द "सभी के सामान्य आशय को अग्रसरण करने में" हैं, जो मूल रूप से 1860 की संहिता में धारा अधिनियमित होने के समय मौजूद नहीं थे। धारा 34 , जैसा कि 1860 की संहिता में अधिनियमित किया गया था , इस प्रकार है:

"जब कोई आपराधिक कार्य कई व्यक्तियों द्वारा किया जाता है, तो उनमें से प्रत्येक व्यक्ति उस कार्य के लिए उसी तरह उत्तरदायी होता है जैसे कि वह कार्य अकेले उसके द्वारा किया गया हो।"

25. धारा के दायरे और विस्तार को व्यापक बनाने के लिए, 1870 में अधिनियम में 27 वें संशोधन द्वारा संशोधन के माध्यम से "सभी के सामान्य आशय को अग्रसरण करने में" शब्द आए।

26. सुप्रसिद्ध उक्ति "सामान्य आशय को अग्रसरण करने में" पहली बार मुख्य न्यायाधीश बार्न्स पीकॉक द्वारा उद्धृत की गई थी, जो कलकत्ता उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ में विराजमान थे, और "द क्वीन बनाम गोराचंद गोप और अन्य" में निर्णय देते समय 3 मार्च 1866 (बंगाल लॉ रिपोर्ट्स, पूरक खंड, 443, पृष्ठ 456 पर रिपोर्ट किया गया)। गोराचंद गोप (सुप्रा) में मुख्य न्यायाधीश के उक्त विचारों ने संभवतः 1870 में संशोधन को प्रेरित किया।

27. तब से, इस धारा की बड़ी संख्या में निर्णयों में न्यायिक व्याख्या की गई है। लॉर्ड सुमनेर ने प्रिवी काउंसिल के लिए बारेंद्र कुमार घोष बनाम राजा सम्राट- एआईआर 1925 पीसी 1) के मामले में बोलते हुए उस खंड के एक संकीर्ण निर्माण के खिलाफ राय व्यक्त की और कहा:

"...हालाँकि, जैसे ही संहिता के इस भाग के अन्य खंडों को देखा जाता है, यह स्पष्ट हो जाता है कि धारा 34 के शब्दों को इस अत्यधिक सीमित अर्थ में पढ़ने से ख़त्म नहीं किया जाना चाहिए।"

28. विद्वान कानून लॉर्ड संहिता की धारा 33 के संदर्भ में धारा 34 की व्याख्या करके इस निष्कर्ष पर पहुंचे।

29. लॉर्ड सुमनेर द्वारा पूर्वोक्त सूत्रीकरण का इस न्यायालय द्वारा विभिन्न मामलों में कई अवसरों पर पालन किया गया है, जिनमें से कुछ यहां नीचे दिए गए हैं।

30. बरेंद्र कुमार घोष (सुप्रा) में, प्रिवी काउंसिल न्यायमूर्ति स्टीफन द्वारा एम्परर वी. निर्मल कांता रॉय, आईएलआर 1914 (खंड 41) कैल. 1072 में संहिता की धारा 34 के सम्बन्ध में दिए गए संकीर्ण निर्माण से सहमत नहीं थी, क्योंकि प्रिवी-काउंसिल के अनुसार इस तरह के निर्माण से अवांछनीय परिणाम हो सकते हैं।

31. इस न्यायालय की संविधान पीठ ने मोहन सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य - एआईआर 1963 एससी 174 में धारा 34 के दायरे की व्याख्या की और इसकी तुलना धारा149 से की और दोनों के बीच आवश्यक अंतर बताया। संविधान पीठ की ओर से व्याख्या करते हुए न्यायमूर्ति गजेंद्र गडकर (जैसा की न्यायूमर्ति उस समय थे) ने कहा कि धारा 149 की तरह , धारा 34 भी रचनात्मक आपराधिक दायित्व के मामलों से संबंधित है, जहां सभी के सामान्य आशय के अग्रसरण के लिए कई व्यक्तियों द्वारा एक आपराधिक कार्य किया जाता है। ऐसा प्रत्येक व्यक्ति उस कार्य के लिए उसी प्रकार से उत्तरदायी है जैसे कि वह कार्य अकेले उसके द्वारा किया गया हो। संविधान पीठ के अनुसार, धारा 34 द्वारा विचारित प्रतिवर्ती आपराधिक दायित्व का आवश्यक घटक सामान्य आशय

का अस्तित्व है। जब ऐसा सामान्य आशय आरोपी व्यक्तियों को उत्प्रेरित करता है और आरोपित उसके अनुसरण में आपराधिक कृत्य करता है, तो सामान्य आशय को साझा करने वाला प्रत्येक व्यक्ति उनमें से किसी एक द्वारा किए गए आपराधिक कृत्य के लिए रचनात्मक रूप से उत्तरदायी होता है। संविधान पीठ ने माना कि कुछ मायनों में धारा 34 और धारा 149 समान हैं और कुछ क्षेत्रों में वे अधिभावी हो सकती हैं लेकिन फिर भी सामान्य आशय, जो कि धारा 34 का अनिवार्य तत्व है, सामान्य उद्देश्य से अलग है जबकि सामान्य उद्धेश्य विधि विरूद्ध जमाव का गठन है।

32. सुरेश और अन्य बनाम यूपी राज्य - (2001) 3 एससीसी 673 के मामले में इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ ने धारा 34 के दायरे पर विचार करते हुए , मोहन सिंह (सुप्रा) में ..... का उल्लेख किया और उस पर निर्भरता व्यक्त की और आगे माना कि धारा 35 का संदर्भ धारा 34 के अभिप्राय को समझने के लिए संहिता की धारा 37 और 38 प्रासंगिक हैं । सुरेश (सुप्रा) में न्यायमूर्ति थॉमस ने कहा कि ये चार प्रावधान एक ही समूह के हैं। सुरेश (सुप्रा) में, न्यायमूर्ति थॉमस ने माना कि आईपीसी की धारा 34 को आकर्षित करने के लिए दो शर्तें मौजूद होनी चाहिए; (1) आपराधिक कृत्य (कार्यों की एक श्रृंखला से मिलकर) एक व्यक्ति द्वारा नहीं, बल्कि एक से अधिक व्यक्तियों द्वारा किया जाना चाहिए था, (2) ऐसे प्रत्येक व्यक्तिगत रूप से किए गए कार्य संयुक्त रूप से दायी

होना चाहिए जो ऐसे सभी व्यक्तियों के सामान्य आशय को अग्रसरण करने में किया गया है।

33. सुरेश (सुप्रा) में, न्यायमूर्ति सेठी ने एक सहमति लेकिन एक अलग राय में, माना कि संहिता की धारा 34 को आकर्षित करने के लिए प्रमुख विशेषता भागीदारी का तत्व है जिसके परिणामस्वरूप अंतिम आपराधिक कृत्य होता है। धारा 34 के बाद के भाग में निर्दिष्ट "कार्य" का अर्थ अंतिम आपराधिक कृत्य है जिसके साथ आरोपी पर सामान्य आशय को साझा करने का आरोप लगाया जाता है। इसलिए, अभियुक्त को उन सभी के सामान्य आशय को आगे अग्रसरण करने के लिए कई व्यक्तियों द्वारा किए गए अंतिम आपराधिक कृत्य के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है। यह धारा अंतिम आपराधिक कृत्य के लिए जिम्मेदार बनने के लिए सभी आरोपी व्यक्तियों द्वारा अलग-अलग कृत्यों की परिकल्पना नहीं करती है। विद्वान न्यायाधीश के अनुसार धारा 34 में प्रयुक्त शब्द 'कार्य' एकल कार्य के रूप में कृत्यों की एक श्रृंखला को दर्शाता है और विद्वान न्यायाधीश ने आगे यह भी स्पष्ट किया कि धारा 34 के तहत दोषी को घटना स्थल से मात्र दूरी के आधार पर खारिज नहीं किया जा सकता है।

34. लल्लन राय एवं अन्य बनाम बिहार राज्य - (2003) 1 एससीसी 268 में इस न्यायालय को फिर से धारा 34 के आवश्यक तथ्यों पर विचार करना पड़ा और मोहन सिंह (सुप्रा) और सुरेश (सुप्रा) में

निर्धारित सिद्धांतों पर निर्भरता व्यक्त की। सुरेश (सुप्रा) में पैरा 44 में निर्धारित सिद्धांतों को मंजूरी देते हुए, न्यायालय ने कहा कि सामान्य आशय को साबित करने के लिए मस्तिष्कों का पूर्व मिलन आैर पूर्व निर्धारित योजना का प्रत्यक्ष प्रमाण या परिस्थितियों का प्रमाण होना आवश्यक है जो आवश्यक रूप से विवादग्रस्त तथ्यों पर निष्कर्ष की ओर ले जाता है और जो अभियुक्त की बेगुनाही के साथ असंगत होना चाहिए और स्पष्टीकरण या किसी अन्य उचित परिकल्पना में असमर्थ होना चाहिए। न्यायालय ने माना कि धारा 34 पर एक नजर डालने से यह स्पष्ट हो जाता है कि धारा 34 का सार एक विशेष परिणाम लाने के लिए आपराधिक कार्रवाई में भाग लेने वाले व्यक्तियों के दिमाग की एक साथ सहमति है। ऐसी सर्वसम्मति घटनास्थल पर विकसित हो सकती है या यह अपराध के घटित होने से पहले हो सकती है, लेकिन किसी भी घटना में ऐसी सहमति अपराध घटित होने से पहले होनी चाहिए।

35. यदि सबूत का परीक्षण जो लल्लन राय (सुप्रा) में निर्धारित किया गया था, तो सुरेश (सुप्रा) के सिद्धांतों का पालन करते हुए, इस मामले में विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा समवर्ती रूप से रेखांकित किए गए और चर्चा किए गए तथ्यों और परिस्थितियों पर लागू किया जाता है। जिसका संदर्भ यहां पहले दिया गया है, यह निष्कर्ष अपरिहार्य है कि वे तथ्य अभियुक्तों की बेगुनाही के साथ स्पष्ट रूप से

असंगत हैं और अभियुक्त व्यक्तियों के अपराध के अलावा किसी भी स्पष्टीकरण या किसी अन्य उचित परिकल्पना में असमर्थ हैं।

36. सरवनन और अन्य बनाम पांडिचेरी राज्य- (2004) 13 एससीसी 238 में न्यायमूर्ति ठक्कर ने फैसला सुनाते हुए कहा कि अंग्रेजी कानून में दो प्रकार के अपराधियों के बीच अंतर है (i) प्रथम श्रेणी के अपराधी, यानी, जो वास्तव में अपराध करते हैं; और (ii) दूसरी श्रेणी के अपराधी, यानी, जो अपराध को अंजाम देने में सहायता करते हैं। लेकिन अंग्रेजी कानून में इस भेद का भारत में सख्ती से पालन नहीं किया गया है। बरेंद्र कुमार घोष (सुप्रा) में बताए गए सिद्धांतों पर निर्भरता व्यक्ति करते हुए विद्वान न्यायाधीश सर्वानन (सुप्रा) में इस निष्कर्ष पर पहुंचे। विद्वान न्यायाधीश ने बरेंद्र कुमार घोष (सुप्रा) में उपरोक्त सिद्धांत से सहमति जताते हुए कहा कि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 34 में उल्लिखित आपराधिक कृत्य एक से अधिक व्यक्तियों की ठोस कार्रवाई का परिणाम है और यदि उक्त परिणाम सामान्य आशय को आगे बढ़ाने में पहुंचा था तब प्रत्येक व्यक्ति को अंतिम कार्य के लिए उत्तरदायी ठहराया जाना चाहिए जैसे कि उसने इसे स्वयं किया हो।

37. रोताश बनाम राजस्थान राज्य - (2006) 12 एससीसी 64, में बाद के फैसले में हममें से एक (माननीय श्री न्यायमूर्ति एसबी सिन्हा) ने लल्लन राय (सुप्रा) और सुरेश (सुप्रा) और बरेंद्र कुमार घोष (सुप्रा) में

निर्णय पारित करते हुए माना कि अपराध करने के सामान्य आशय के प्रभाव को परिस्थितियों की समग्रता से आंका जाना चाहिए। इस प्रकार, न्यायमूर्ति सिन्हा ने धारा 34 के प्रावधानों की बहुत व्यापक व्याख्या की, जो बरेंद्र कुमार घोष (सुप्रा) में प्रिवी काउंसिल के निर्णय से इस धारा को दी गई व्याख्या के अनुरूप है।

38. उपरोक्त सिद्धांतों का पालन करते हुए, जैसा कि हमें करना चाहिए, इस न्यायालय को यह निष्कर्ष निकालने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में अभियुक्तों का सामान्य आशय और उनकी पूर्व सहमति काफी हद तक साबित होती है।

39. किसी मामले में, जैसा कि वर्तमान मामले में है, भले ही सह-अभियुक्तों में से एक को बरी कर दिया जाए, लेकिन यह अपने आप में अन्य सह-अभियुक्तों को अपराध के उनके संयुक्त दायित्व से मुक्त नहीं करता है। कानून बिल्कुल स्पष्ट है कि एक सह-अभियुक्त के बरी होने के बावजूद , धारा 34 के तहत संयुक्त दायित्व के आधार पर अन्य आरोपियों को दोषी ठहराने का अधिकार न्यायालय के पास है, यदि उनके खिलाफ "सामान्य आशय के अग्रसरण में आगे बढ़ने" में अपराध करने का सबूत है।

40. उपरोक्त सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, हमारे विचार में, इस न्यायालय को विचारण न्यायालय के निष्कर्ष की पुष्टि करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निष्कर्षों में कोई त्रुटि नहीं दिखती है।

41. इसके अलावा भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अपील में, यह न्यायालय आम तौर पर साक्ष्य की पुनः समीक्षा आैर विश्लेषण नहीं करता जब तक कि यह स्पष्ट रूप से नहीं दिखाया जाता है कि विचारण न्यायालय या उच्च न्यायालय ने विधि आैर प्रक्रिया की स्पष्ट रूप से त्रुटि की है या जो निष्कर्ष निकाले गये हैं वे स्पष्ट रूप से त्रुटिपूर्ण ना हो। भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप का दूसरा क्षेत्र तब हो सकता है, जब सिद्ध तथ्यों पर, उच्च न्यायालय द्वारा कानून में गलत रूप से हस्तक्षेप किया गया हो। यह स्थिति पूर्व में ही पर्याप्त रूप से स्पष्ट हो चुकी है जिसे विवादग्रस्त नहीं किया जा सकता। हालाँकि, इस संबंध में दुली चंद बनाम दिल्ली प्रशासन- (1975) 4 एससीसी 649, दलबीर कुअर बनाम। पंजाब राज्य - (1976) 4 एससीसी 158, रमनभाई नारणभाई पटेल बनाम। गुजरात राज्य - (2000) 1 एससीसी 358, चंद्र बिहारी गौतम बनाम। बिहार राज्य - (2002) 9 एससीसी 208) में इस न्यायालय के निर्णयों का संदर्भ दिया जा सकता है।

42. इन सभी मामलों पर सुप्रीम कोर्ट ने हाल ही में राधा मोहन सिंह उर्फ लाल साहब और अन्य बनाम यूपी राज्य- (2006) 2 एससीसी 450 के मामले में विचार किया है और उसी निष्कर्ष पर पहुंचा गया है।

43. यहां उच्च न्यायालय के निष्कर्ष में कोई त्रुटि नहीं है और न ही सिद्ध तथ्यों पर कोई गलत कानूनी निष्कर्ष निकाला गया है।

44. उपर्युक्त वर्णित कारणों से, इस न्यायालय को उपरोक्त अपीलों में कोई योग्यता नहीं मिलती है, जिन्हें तदनुसार खारिज किया जाता है।

45. अपीलकर्ता जमानत पर हैं, उनके जमानत मुचलके रद्द किए जाते हैं और सजा की शेष अवधि, यदि कोई हो, भुगतने के लिए उन्हें तुरंत हिरासत में भेजा जाता है।

आर.पी. अपीलें खारिज

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी रंजना (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है आैर किसी अन्य उद्घेश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक आैर आधिकारिक उद्घेश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा आैर निष्पादन आैर कार्यान्वयन के उद्घेश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।